103

P.T.O.

बाईलीरूबिन (पित्त रस) की मात्रा पांच दिन में लगभग आधी रह जाती है और आगे इसी अनुपात में घटती जाती है । पीलियानाशक इस दवा से बड़े-बूढ़े एवं बच्चे सभी को लाभ मिलता है तथा किसी प्रकार के विकार उत्पन्न नहीं होते । पीड़ित रोगी हमसे इस औषधि को सामान्य मूल्य पर प्राप्त कर सकते हैं ।

गठिया वात

जोड़ों का शोथ एवं पीड़ा वृद्धावस्था की सामान्य शिकायतें हैं । लेकिन जोड़ संबंधी ये शिकायतें गठिया एवं रूमैटिक रोगों में भी पायी जाती हैं । यही कारण है कि इन रोगियों की दशा अत्यंत दयनीय बन जाती है ।

इन बीमारियों से छुटकारा पाने के लिए वर्तमान चिकित्सा पद्धति में कई प्रकार की पीड़ानाशक दवाओं का विधान है तथा कुछ चिकित्सक स्टीरॉइड्स का प्रयोग भी करते हैं जिसकी वजह से रोगियों को तत्संबंधी दोषों का भी भागीदार बनना पड़ता है ।

चिकित्सा : आयुर्वेद में गठिया वात के इलाज के लिए गुग्गुल, महा युगराज गुग्गुल एवं त्रिफला गुग्गुल आदि का विशेष प्रयोग होता है तथा विषतिंदुक वटी खिलायी जाती है । इसी प्रकार प्रभावित जोड़ों पर स्थानीय रूप से महामांष तेल, सैंधवादि तेल एवं महानारायण तेल आदि का प्रयोग किया जाता है ।

कुछ समय पूर्व हमने अंडमान निकोबार द्वीप समूह का भ्रमण किया और वहां से कुछ ऐसी नवौषधियां प्राप्त कीं, जिनके शोधित तेल से गठिया वात में विशेष लाभ मिलता है । मिलनेवाले परिणामों के आधार पर यह तेल जोड़ों की पीड़ा एवं सरवाइकल स्पौंडीलोसिस में विशेष लाभकारी पाया गया है ।

कैंसर के लिए एक उपयोगी वनौषधि

कैंसर को मारक-रोग कहा जाए तो अतिश्योक्ति नहीं होगी, क्योंकि अभी तक इस बीमारी का कोई भी सफल इलाज नहीं है यद्यपि विभिन्न चिकित्सा पद्धतियों में तत्संबंधी इलाज की व्यवस्था होती है ।

वर्तमान विज्ञान की दवाओं से लाक्षणिक लाभ तो मिल जाता है, समूल रूप से रोग नष्ट नहीं होता । इसलिए ये रोग अंततोगत्वा काल के गाल में समा जाते हैं ।

हाल में हमारा संपर्क जयपुर के २/१३, मालवीय नगर, निवासी डॉ. एन. एल. तिवारी नामक एक वैद्य से हुआ है जो जड़ी-बूटियों के मिश्रण से कैंसर का इलाज करते हैं ।

डॉ. तिवारी द्वारा प्रस्तुत आंकड़ों से पता चलता है कि उनकी औषधि से कैंसर पीड़ित कई रोगियों को लाभ मिला है । उनके अनुसार उन सभी रोगियों का निदान वर्तमान आयुर्विज्ञान की पद्धतियों से हुआ था तथा उनकी चिकित्सा के पश्चात निदान संबंधी परिणाम सामान्य हो गये एवं रोगियों को पूर्णरूपेण स्वास्थ्य लाभ मिला ।

हमारी मान्यता है कि यदि सभी रोगियों का इलाज प्रारंभ से ही किया जाए तो अधिक लाभकारी परिणाम मिल सकते हैं ।

डॉ. तिवारी से हमने उनकी कर्कटोल नामक दवा प्राप्त की तथा अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, नयी दिल्ली के भैषज्य विज्ञान विभाग में उस पर परीक्षण किये तथा

चूहे एवं चुहियों में उसकी एक्यूट एवं सबएक्यूट टाक्सिसिटी स्थापित की । इन परिणामों के आधार पर कर्कटौल को पूर्णरूप से सुरक्षित पाया गया है ।

वास्तव में इस औषधि पर आगे अनुसंधान की आवश्यकता है ताकि उसकी दीर्घकालीन सुरक्षा एवं उपयोगिता स्थापित हो सके ।

यहां पर यह लिखना भी आवश्यक है कि कैंसर के इलाज के लिए वर्तमान चिकित्सा पद्धति में जो दवाएं मिलती हैं अथवा साधन प्रयोग किये जाते हैं—शरीर पर जहरीला प्रभाव दिखाते हैं तथा विषाक्तता के कारण ही वे कैंसर कोशिकाओं को नष्ट करते हैं ।

इसके विपरीत कर्कटौल में इस प्रकार के गुण/दुर्गुण नहीं पाये गये हैं । प्राप्त आंकड़ों से पता चलता है कि जिन रोगियों ने साल-दो-साल तक इस औषधि का प्रयोग किया है—उनमें किसी प्रकार के दोष या विकार नहीं पाये गये तथा उन्हें कैंसर से मुक्ति मिली है । मैंने स्वयं कई मरीजों में इस दवा का लाभ देखा है ।

डॉ. तिवारी जो कार्य कर रहे हैं, उस पर मैं भी अनुसंधान कर रहा हूं । मेरी राय है कि रोगी इस दवा का प्रयोग तो करें, एलोपैथी चिकित्सा पद्धति से डरें नहीं । इस दवा को वे एलोपैथी इलाज के साथ ले सकते हैं । थोड़े समय में संभव है एलोपैथी की आवश्यकता न पड़े ।

बवासीर एवं फिशर

'कादम्बिनी' के (जनवरी, १९९३) अंक में हमने बवासीर एवं फिशर संबंधी विस्तृत जानकारी प्रदान की थी । इतना लिखना

कर्कटौल कैंसर की चिकित्सा के लिए एक प्रभावकारी आयुर्वेदिक औषधि । यह रोगी पर कोई दूषित प्रभाव भी नहीं डालती

आवश्यक है कि यह बीमारी लगभग साठ प्रतिशत व्यक्तियों को किसी-न-किसी रूप में अवश्य होती है तथा तीव्रता के आधार पर लक्षण उत्पन्न करती है । इस रोग के मुख्य लक्षण हैं गुदा द्वार से रक्त आना, मस्से बनना, पीड़ा, जलन एवं खुजली होना इत्यादि । इसी प्रकार बवासीर के साथ जब फिशर की शिकायत हो जाती है, वेदना तीव्रता हो जाती है और रोगी को किसी भी अवस्था में आराम नहीं मिलता । यही कारण है कि यह रोग अत्यंत कष्टदायी बताया गया है ।

साधारण रूप से इस रोग को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है । जैसे, प्रथम प्रकार के रोग में गुदा के भीतर अथवा बाहर मस्से बन जाते हैं जिनमें शोथ, पीड़ा, जलन एवं रक्तस्राव की शिकायतें पायी जाती हैं । दूसरी अवस्था में मस्सों का आकार बढ़ जाता है तथा शौच क्रिया के साथ मस्से गुदामार्ग के बाहर आ जाते हैं परंतु बाद में पुनः अपने स्थान पर बैठ जाते हैं । तृतीयावस्था में मस्सों का आकार इतना बढ़ जाता है कि वे अंदर नहीं जाते तथा बाहर की ओर ही लटके रहते हैं । यही कारण है कि द्वितीय एवं तृतीय अवस्थाओं में स्थानीय इंफैक्शन की संभावना बढ़ जाती है जिसकी